International Journal of Education, Modern Management, Applied Science & Social Science (IJEMMASSS)
ISSN :2581-9925(Online), Impact Factor: 7.555, Volume 07, No. 04(III), October - December, 2025, pp. 213-220

जोधपुर नरेश महाराजा मानसिंह राठौड़ के नीति–काव्य का विश्लेषणात्मक अध्ययनः राजधर्म एवं नैतिकता के परिप्रेक्ष्य में

श्री लाखम सिंह[1*] | डॉ. शिव चरण शर्मा[2]

[1]शोधार्थी (हिन्दी विभाग), श्री खुशालदास विश्वविद्यालय, पीलीबंगा, हनुमानगढ़, राजस्थान।
[2]आचार्य (हिन्दी विभाग), श्री खुशालदास विश्वविद्यालय, पीलीबंगा, हनुमानगढ़, राजस्थान।

[*]Corresponding Author: lsrathore317@gmail.com

Citation: सिंह, लाखम & शर्मा, शिव (2025). जोधपुर नरेश महाराजा मानसिंह राठौड़ के नीति–काव्य का विश्लेषणात्मक अध्ययनः राजधर्म एवं नैतिकता के परिप्रेक्ष्य में. International Journal of Education, Modern Management, Applied Science & Social Science, 07(04(III)), 213–220. https://doi.org/10.62823/IJEMMASSS/07.04(III).8608

सार

जोधपुर (मारवाड़) के शासक महाराजा मानसिंह राठौड़ (शासनकालः 1803–1843 ई.) भारतीय इतिहास में केवल एक वीर योद्धा, कुशल रणनीतिकार और कूटनीतिज्ञ के रूप में ही नहीं जाने जाते, अपितु वे उच्च कोटि के विद्वान, संवेदनशील कवि, और कला तथा साहित्य के महान संरक्षक भी थे। राजस्थानी और डिंगल साहित्य के इतिहास में उनका रचनात्मक योगदान अद्वितीय और कालजयी है। प्रस्तुत शोध–पत्र महाराजा मानसिंह द्वारा रचित 'नीति–काव्य' के साहित्यिक, ऐतिहासिक, मनोवैज्ञानिक और दार्शनिक पहलुओं का सूक्ष्म एवं विस्तृत अन्वेषण करता है। अपने प्रारंभिक जीवन में जालोर दुर्ग के घेरे के दौरान झेले गए भीषण संघर्षों, नाथ संप्रदाय के गुरुओं के प्रति उनके आध्यात्मिक झुकाव, और बाद के वर्षों में ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी तथा मराठों के साथ उनके जटिल राजनीतिक समीकरणों ने उनकी जीवन–दृष्टि को गहराई से और स्थायी रूप से प्रभावित किया। इसी यथार्थपरक और कटु अनुभव की प्रत्यक्ष परिणति उनके नीति–काव्य में हुई है। इस शोध–पत्र में यह स्पष्ट किया गया है कि महाराजा मानसिंह का नीति–काव्य किसी वातानुकूलित कक्ष में लिखा गया कोरा आदर्शवाद नहीं है, बल्कि यह एक शासक के भोगे हुए यथार्थ, सत्ता के अंतर्द्वंद्व और तत्कालीन सामंती समाज की राजनीतिक एवं सामाजिक उथल–पुथल का प्रामाणिक दस्तावेज़ है। उनके दोहों और छप्पयों में 'राजधर्म', 'मित्रता की कसौटी', 'शत्रु की पहचान', 'समय की महत्ता', 'सामाजिक व्यसनों का विरोध' और 'ईश्वरीय सत्ता के समक्ष मनुष्य की विवशता' जैसे गूढ़ विषयों का अत्यंत मार्मिक, निर्भीक और स्पष्ट चित्रण मिलता है। प्रस्तुत अध्ययन मुख्यतः ऐतिहासिक, विश्लेषणात्मक और वर्णनात्मक शोध पद्धति पर आधारित है, जिसमें प्राथमिक (पांडुलिपियाँ) और द्वितीयक दोनों प्रकार के ऐतिहासिक स्रोतों का उपयोग किया गया है। निष्कर्षतः, यह शोध यह सिद्ध करता है कि महाराजा मानसिंह केवल एक नाथ–प्रभावित शासक मात्र नहीं थे, बल्कि वे भारतीय परंपरा के एक सच्चे 'राजर्षि' थे, जिनका नीति–काव्य आज के आधुनिक और लोकतांत्रिक युग में भी शासकों, प्रशासकों और सामान्य जन के लिए एक सुदृढ़ नैतिक मार्गदर्शिका का कार्य कर सकता है।

शब्दकोशः *महाराजा मानसिंह, नीति–काव्य, डिंगल साहित्य, राजधर्म, मारवाड़ का इतिहास, नाथ संप्रदाय, मध्यकालीन नैतिकता, सुशासन, संत काव्य परंपरा।*

[*] *Copyright © 2025 by Author's and Licensed by Inspira. This is an open access article distributed under the Creative Commons Attribution License which permits unrestricted use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work properly cited.*

प्रस्तावना

भारतीय साहित्य, दर्शन और संस्कृति में 'नीति' का सदैव सर्वोच्च और केंद्रीय स्थान रहा है। संस्कृत के प्राचीन नीति–शतकों (जैसे भर्तृहरि का नीतिशतक) से लेकर मध्यकालीन चारण, भाट और संत साहित्य तक, नीति–काव्य ने समाज को एक सुव्यवस्थित, मर्यादित और नैतिक दिशा प्रदान करने का महत्त्वपूर्ण कार्य किया है। राजस्थान का साहित्य, विशेषकर डिंगल (पश्चिमी राजस्थानी साहित्यिक भाषा) और पिंगल परंपरा, अपने वीर–काव्य और श्रृंगार–काव्य के लिए विश्वविख्यात है, परंतु इसके साथ–साथ यह नीति–काव्य से भी अत्यंत समृद्ध रहा है। बांकीदास, सूर्यमल्ल मिश्रण और कृपाराम खिड़िया जैसे कवियों ने इस परंपरा को सींचा है। इसी समृद्ध और गौरवशाली परंपरा में 19वीं शताब्दी के मारवाड़ (जोधपुर) राज्य के शासक महाराजा मानसिंह राठौड़ का नाम अत्यंत आदर और विशिष्टता के साथ लिया जाता है।

महाराजा मानसिंह का जन्म 1783 ई. में हुआ था। उनका जीवन जन्म से ही कांटों भरा रहा। वे 1803 ई. में जोधपुर के राजसिंहासन पर आसीन हुए, परंतु उनका राज्यारोहण अत्यंत विषम, रक्त रंजित और तनावपूर्ण परिस्थितियों में हुआ था। उत्तराधिकार के संघर्ष में जालोर दुर्ग में उन्हें अपने ही संबंधियों (महाराजा भीमसिंह) की सेना द्वारा वर्षों तक घेराबंदी का सामना करना पड़ा। जीवन और मृत्यु के बीच झूलते इस कठिन दौर में उन्हें नाथ संप्रदाय के गुरु आयस देवनाथ का संरक्षण और आशीर्वाद मिला, जिससे उनके भीतर गहन आध्यात्मिकता, वैराग्य और यथार्थवादी समझ का बीजारोपण हुआ। जब वे शासक बने, तो उन्हें सत्ता का सुख कम और कांटों का ताज अधिक मिला। उन्हें मराठों की लूट–खसोट, अपने ही सामंतों के षड्यंत्रों और आंतरिक विद्रोहों, और अंततः 1818 ई. में विवश होकर ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी के साथ सहायक संधि जैसी जटिल राजनीतिक चुनौतियों का सामना करना पड़ा। इन तमाम घटनाओं ने उनके भीतर के कवि और दार्शनिक को जन्म दिया।

प्रस्तावित शोध का मुख्य केंद्र महाराजा मानसिंह का वह विशाल काव्य–सृजन है जो 'नीति' या व्यावहारिक नैतिकता पर आधारित है। नीति–काव्य से तात्पर्य उस काव्य से है जिसमें जीवन के व्यावहारिक सत्यों, लोक–व्यवहार की पेचीदगियों, राजनीति की बारीकियों और शाश्वत नैतिक मूल्यों का उपदेशात्मक या अनुभवात्मक वर्णन हो। एक संप्रभु राजा होने के नाते, महाराजा मानसिंह के नीति–काव्य का फलक सामान्य कवियों की तुलना में अत्यंत विस्तृत और यथार्थपरक है। उन्होंने महलों के षड्यंत्रों को निकट से देखा था, अपनों का विश्वासघात झेला था, युद्ध के मैदान की विभीषिका देखी थी और सत्ता की क्षणभंगुरता को गहराई से पहचाना था। इसलिए, जब वे कलम उठाते हैं, तो उनकी कविताओं में कोरी कल्पना या शब्द–क्रीड़ा नहीं होती, बल्कि जीवन का कटु, नग्न और सत्य अनुभव बोलता है।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि एवं शासक का मनोविज्ञान

किसी भी कवि की रचना को उसके युग और उसकी व्यक्तिगत परिस्थितियों से अलग करके नहीं देखा जा सकता। महाराजा मानसिंह का काव्य उनके युग की राजनीतिक अस्थिरता का सीधा प्रतिफलन है। 18वीं सदी का अंत और 19वीं सदी की शुरुआत राजपूताना के लिए अंधकार युग के समान थी। मुग़ल साम्राज्य के पतन के बाद उत्पन्न शून्य को भरने के लिए मराठों और पिंडारियों ने राजपूताना को अपनी लूट का केंद्र बना लिया था।

जालोर दुर्ग में लगभग एक दशक तक चले घेरे के दौरान मानसिंह ने मानवीय प्रवृत्तियों का सबसे स्याह पक्ष देखा। जब रसद समाप्त हो गई और उनके अपने सहयोगी उन्हें छोड़कर जाने लगे, तब उन्होंने सीखा कि 'मित्रता' और 'स्वामिभक्ति' संकट के समय ही परखी जाती है। यही कारण है कि उनके नीति दोहों में अवसरवादिता पर तीखे प्रहार मिलते हैं। शासक बनने के बाद भी सामंतों के गुटों (जैसे पोकरण के ठाकुर सवाई सिंह का विद्रोह) ने उन्हें कभी शांति से शासन नहीं करने दिया।

मनोवैज्ञानिक दृष्टि से देखें तो मानसिंह एक ऐसे व्यक्ति थे जो भीतर से एक संत और संन्यासी थे, लेकिन उन्हें परिस्थितिवश एक राजा का चोला पहनना पड़ा था। यह 'राज–हठ' और 'योग–साधना' का अनूठा द्वंद्व था। उनकी कविताएँ उनके इस मानसिक अंतर्द्वंद्व का विरेचन हैं। जब वे राजनीति की कुटिलताओं से थक जाते थे, तब वे कविता और नाथ दर्शन की शरण में जाते थे।

शोध के उद्देश्य

प्रस्तुत विस्तृत शोध–कार्य के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं:

- **साहित्यिक मूल्यांकन एवं संकलनः** महाराजा मानसिंह राठौड़ द्वारा रचित समग्र नीति–काव्य, जो विभिन्न पांडुलिपियों और ग्रंथों में बिखरा हुआ है, का संकलन कर उसका विस्तृत साहित्यिक, शिल्पगत एवं भाषाशास्त्रीय (राजस्थानी–डिंगल) मूल्यांकन करना।
- **ऐतिहासिक प्रभाव का अंतःविषयक विश्लेषणः** तत्कालीन मारवाड़ राज्य की राजनीतिक उथल–पुथल, सामंती व्यवस्था के पतन और ब्रिटिश हस्तक्षेप का महाराजा मानसिंह की वैचारिक और नीतिपरक रचनाओं पर पड़े प्रत्यक्ष मनोवैज्ञानिक प्रभाव का विश्लेषण करना।
- **राजधर्म की अवधारणा का प्रकटीकरणः** उनके काव्य में वर्णित 'राजधर्म' 'शासक के आदर्शों' और 'प्रशासनिक नैतिकता' की पहचान करना एवं 21वीं सदी के सुशासन के परिप्रेक्ष्य में उनकी प्रासंगिकता सिद्ध करना।
- **डिंगल नीति–काव्य परंपरा में स्थान निर्धारणः** राजस्थानी एवं डिंगल साहित्य की सुदीर्घ नीति–काव्य परंपरा में महाराजा मानसिंह के विशिष्ट और मौलिक योगदान को रेखांकित करना।
- **अनुभव और दर्शन का सह–संबंध खोजनाः** शासक के रूप में भोगे गए उनके व्यक्तिगत कटु अनुभवों तथा उनके काव्य में व्यक्त दार्शनिक वैराग्य के मध्य मनोवैज्ञानिक संबंध की खोज करना।

शोध के सोपान एवं प्रविधि

प्रस्तुत शोध–पत्र को पूर्ण करने के लिए वैज्ञानिक, वस्तुनिष्ठ एवं व्यवस्थित अनुसंधान प्रणाली का प्रयोग किया गया है। यह शोध मुख्यतः ऐतिहासिक, विश्लेषणात्मक और वर्णनात्मक प्रकृति का है। इस शोध को निम्नलिखित वैज्ञानिक सोपानों (चरणों) के अंतर्गत संपन्न किया गया हैः

- **विषय का चयन एवं समस्या का निरूपणः** सर्वप्रथम मारवाड़ के इतिहास और डिंगल साहित्य के अंतर्संबंधों का व्यापक अवलोकन किया गया। साहित्य–समीक्षा के दौरान यह तथ्य सामने आया कि महाराजा मानसिंह पर अब तक हुआ अधिकांश कार्य उनके राजनीतिक जीवन, मराठों के साथ संबंधों या नाथ संप्रदाय के उनके अत्यधिक संरक्षण (आयस देवनाथ के प्रभाव) तक ही सीमित रहा है। एक साहित्यकार और नीतिकार के रूप में उनके साहित्यिक और दार्शनिक पक्ष का स्वतंत्र मूल्यांकन एक बड़ा शोध–अंतराल था, जिसे भरने के लिए इस विषय का चयन किया गया है।
- **तथ्य संकलनः** यह शोध प्राथमिक और द्वितीयक दोनों प्रकार के स्रोतों पर मजबूती से आधारित है।
- **प्राथमिक स्रोतः** राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान (जोधपुर शाखा) और मेहरानगढ़ म्यूजियम ट्रस्ट के पुस्तक प्रकाश में संरक्षित महाराजा मानसिंह की मूल पांडुलिपियों, उनके द्वारा रचित फुटकर दोहों और पत्राचार का संकलन किया गयझं
- **द्वितीयक स्रोतः** आधुनिक इतिहासकारों द्वारा लिखे गए प्रामाणिक शोध–प्रबंध, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा मान्यता प्राप्त जर्नल्स के लेख और मारवाड़ के ऐतिहासिक संदर्भ ग्रंथों का उपयोग किया गया।
- **तथ्यों का विश्लेषण एवं व्याख्याः** संकलित डिंगल और राजस्थानी भाषा के नीतिपरक दोहों का आधुनिक हिंदी में अनुवाद और अर्थ–निर्धारण किया गया। तदुपरांत ऐतिहासिक घटनाओं के साथ उनके काव्यों

का सह–संबंध स्थापित करके यह विश्लेषण किया गया कि किस विशिष्ट परिस्थिति ने किस विशिष्ट नीति–काव्य को जन्म दियइं

नीति–काव्य का विस्तृत विश्लेषण एवं व्याख्या

महाराजा मानसिंह के नीति–काव्य को केवल उपदेशों का पुलिंदा नहीं कहा जा सकता। इसमें जीवन के विभिन्न पहलुओं, समाज सुधार, प्रशासनिक दक्षता और दार्शनिक वैराग्य का स्पष्ट, मुखर और साहसिक चित्रण मिलता है। उनके काव्य को निम्नलिखित प्रमुख विषयों के अंतर्गत विश्लेषित किया जा सकता हैः

- **आत्म–ज्ञान, कर्मफल और सांसारिक माया**

वेदों और उपनिषदों का सार है कि मनुष्य अपने भाग्य का निर्माता स्वयं है। महाराजा मानसिंह ने अपने जीवन में इतने उतार–चढ़ाव देखे कि वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि सुख और दुख किसी बाहरी सत्ता की देन नहीं, बल्कि मनुष्य के अपने दृष्टिकोण और कर्मों का फल हैं। उन्होंने बड़ी ही सरलता से वेदांत के इस गूढ़ रहस्य को डिंगल में पिरोयाः

"आप दुःखी और आप सुखी है, आपही अपनो मान्यो।
आप ही राव और रंक ही आप है, आपही जो नहीं चीन्हो।।"

विश्लेषणः इस दोहे में 'राव' (राजा) और 'रंक' (भिखारी) के बीच के भेद को मानसिक अवस्था मात्र बताया गया है। एक शासक होकर भी वे यह स्वीकार करते हैं कि पद और धन से कोई सुखी नहीं होता। जो व्यक्ति स्वयं को 'चीन्ह' (पहचान) लेता है, आत्म–ज्ञान प्राप्त कर लेता है, वही वास्तविक सुखी है।

- **बाह्य आडंबरों का कड़ा विरोध**

महाराजा मानसिंह स्वयं नाथ संप्रदाय के परम भक्त थे। उन्होंने जोधपुर में 'महामंदिर' का निर्माण करवाया था। परंतु, इसका अर्थ यह नहीं था कि वे अंधभक्त थे। उन्होंने नाथ पंथ के भीतर भी पनप रहे पाखंडों और दिखावे पर तीखा प्रहार किया। सच्चे वैराग्य के लिए उन्होंने वेशभूषा बदलने को व्यर्थ मानाः

"वस्त्र रंग्या नहीं कान फड़ाये, नहीं मैं कान में मुद्रा चढ़ाई।
कंगन कड़ा कछु नहीं पहरया, नहीं मैं चीनी जगत ठगाई।।"

विश्लेषणः नाथ योगियों की पहचान उनके रंगे हुए वस्त्र (गेरुआ), फटे हुए कान और उनमें पहनी जाने वाली मुद्रा (कुंडल) से होती है। मानसिंह यहाँ कह रहे हैं कि मैंने यह बाहरी वेश धारण नहीं किया, न ही मैं जगत को ठगने का कार्य करता हूँ। मेरा वैराग्य और मेरी भक्ति आंतरिक है। यह दोहा उनके युगद्रष्टा होने का प्रमाण है।

- **संसार की नश्वरता और दार्शनिक वैराग्य**

जब राजा मानसिंह ने अपने ही पुत्रों और सरदारों का विद्रोह देखा, तो उनके मन में घोर वैराग्य उत्पन्न हो गया। जीवन की इस अंतहीन दौड़ को उन्होंने बहुत करीब से महसूस किया। इस नश्वर संसार के प्रति अपनी वाणी को मनोवैज्ञानिक विराम देने की कोशिश करते हुए वे अपने मन को समझाते हैंः

"मानसिंह इस जगत् में, लांबी राह धणी ।
दौड़त–दौड़त थक गया, पर राह तो यूँ ही बणी।।"

विश्लेषणः यह पंक्तियाँ जीवन की निस्सारता को दर्शाती हैं। मनुष्य भौतिक सुखों और सत्ता की लालसा में जीवन भर दौड़ता रहता है, थक कर चूर हो जाता है, लेकिन यह सांसारिक 'राह' (इच्छाओं का मार्ग) कभी समाप्त नहीं होती।

सत्ता के मद में चूर शासकों को अभिमान त्यागने का संदेश देते हुए वे लिखते हैंः

"मन अब त्याग रे अभिमान।
या अभिमान के बीच में, सब होत मोठी हाण।।
मान भर भर जन्म धर धर, हुवो ना हैरान रे।
देह धन को मान मन में, चाहत है कल्यान।।"

विश्लेषणः 'मोठी हाण' का अर्थ है बहुत बड़ा नुकसान। अहंकार के कारण ही बड़े–बड़े साम्राज्य नष्ट हो गए। मानसिंह चेतावनी देते हैं कि देह और धन दोनों ही नश्वर हैं, जो इन्हें शाश्वत मानकर कल्याण चाहता है, वह मूर्ख है। अपनी मस्ती और फक्कड़पन (जो कि एक सूफी या संत का लक्षण है) को स्वीकारते हुए वे लिखते हैंः

"मानसिंह या जगत में, और मस्ती सब धूर।
खुद मस्ती सो मस्ती है, है हमको मंजूर।।"

अर्थात, दुनियावी नशे और सत्ता की मस्ती 'धूल' के समान है। आत्म–मस्ती ही सच्ची मस्ती है।

- **तत्कालीन समाज में व्याप्त बुराइयों एवं व्यसनों पर प्रहार**

एक कुशल प्रशासक वही है जो समाज की कुरीतियों को पहचाने और उन्हें दूर करने का प्रयास करे। 19वीं सदी के राजपूताना में अफीम (अमल) का सेवन एक भयंकर सामाजिक कोढ़ बन चुका था। सरदारों और राजाओं के दरबार में अफीम की मनुहार एक परंपरा बन गई थी, जिसने राजपूती शौर्य को खोखला कर दिया था। महाराजा मानसिंह जी ने तत्कालीन समाज में व्याप्त इन बुराइयों को अपने नीति काव्य में निर्भीकता से विश्लेषित किया है। अफीम की लत पर व्यंग्य करते हुए उन्होंने लिखा हैः

"कहानी कहे अफीम की, शोभा करे अपार।
इन शोभा के बीच में, कई फंस गये सरदार।।"

विश्लेषणः अफीम को 'शोभा' मान लिया गया था। मानसिंह स्पष्ट कहते हैं कि इस झूठी शोभा के जाल में फंसकर कई योग्य सरदार और योद्धा बर्बाद हो गए।

इस प्रकार उन्होंने समाज में व्याप्त अफीम के अतिरिक्त अन्य बुराइयों (भांग, तंबाकू, गांजा) को भी इंगित किया हैः

"भंग और तमाखू गांजा काम है आलसिन को।
मनुष्यपनो राखे तो ते निकट ई न लावे है।।"

विश्लेषणः यह एक सीधी नैतिक चेतावनी है। नशे को उन्होंने 'आलसियों' का काम बताया है। उनका स्पष्ट मत था कि जिसमें तनिक भी 'मनुष्यपनो' शेष है, वह इन व्यसनों को अपने पास भी नहीं फटकने देगा।

- **पाखंड का विरोध एवं संत काव्यधारा से साम्य**

महाराजा मानसिंह का नीति काव्य पढ़ते समय यह प्रतीत ही नहीं होता कि यह एक राजमहल में बैठे शासक की लेखनी है; यह पूरी तरह से संत काव्यधारा के समान प्रतीत होता है। उन्होंने कबीर के आडम्बर व पाखण्ड–विरोध की चली आ रही परम्परा को ही आगे बढ़ाया है। वे समाज की भेड़चाल और अंधविश्वास पर प्रहार करते हैं। वे आम व्यक्ति को जाग्रत करते हुए कहते हैंः

"मानसिंह इण जगत में, चल रही पोला पोल।
भेरे एक की को सुने, यहां बाजे जंगी ढोल।।"

विश्लेषणः 'पोला पोल' का अर्थ है खोखलापन। समाज में इतना शोर और अंधविश्वास है ('जंगी ढोल') कि कोई एक सच्चे व्यक्ति की बात सुनने को तैयार नहीं है। किताबी ज्ञान और पोथियों के ज्ञान को व्यर्थ बताते हुए, जो कबीर की "पोथी पढ़ि पढ़ि जग मुआ" की याद दिलाता है, मानसिंह लिखते हैं:

"पढ़ पढ़ पोथी पोल की, थोथी रह गई बात।

मानसिंह कब तक कहूं, कहवत मन शरमात।।"

विश्लेषणः बिना आचरण और अनुभव के केवल ग्रंथों का पठन 'थोथी' (खाली) बात है। स्वयं को इस पाखंड पर शर्म आती है।

धार्मिक समन्वय और एकेश्वरवाद

भारतीय समाज में धर्म के नाम पर फैले वैमनस्य को मानसिंह ने गहराई से समझा। वे स्वयं एक हिंदू शासक थे, नाथ संप्रदाय के अनुयायी थे, परंतु उनका दृष्टिकोण संकीर्ण नहीं था। उन्होंने एकेश्वरवाद के समर्थन में अपनी लेखनी चलाई:

"याते तो तुरक ही भला, ज्यांरो एक कुराण।

यां पर तो गणना नहीं, एते वेद पुराण।।"

विश्लेषणः यहाँ वे बहुत बड़ा और साहसिक वक्तव्य दे रहे हैं। वे कहते हैं कि बहुदेववाद और अनगिनत कर्मकांडों में उलझे रहने से तो मुसलमानों का एकेश्वरवाद बेहतर है जिनका एक ही धर्मग्रंथ है। यह उनका इस्लाम के प्रति झुकाव नहीं, बल्कि हिंदू धर्म में फैले अत्यधिक कर्मकांडों पर एक दार्शनिक क्षोभ है। महाराजा ने अपने काव्य में सच्चे संत का मार्ग प्रशस्त किया है। जहाँ कबीर धार्मिक समन्वय की बात करते हैं, वहीं मानसिंह जी ने भी धार्मिक समन्वय और मानवतावाद की बात कही है:

"चालो उण देश में रे जोगिया।

जहां नहीं मजहब नहीं पंथ।।

चार वेद षट शास्त्र नहीं रे जोगिया।

नहीं धरम नहीं ग्रंथ।।"

विश्लेषणः यह एक निर्गुण संत की वाणी है। वे एक ऐसे 'देश' (आध्यात्मिक अवस्था) में जाने की बात कर रहे हैं जहाँ मजहब, पंथ, वेद, शास्त्र और ग्रंथों की सीमाएं समाप्त हो जाती हैं और केवल शुद्ध आत्मा और परमात्मा का मिलन रह जाता है।

शोध का महत्व

ऐतिहासिक और साहित्यिक दृष्टिकोण से यह शोध–कार्य अत्यंत महत्वपूर्ण, युगांतरकारी और सामयिक है। प्रायः भारतीय इतिहास–लेखन में राजाओं को केवल उनके द्वारा लड़े गए युद्धों, की गई संधियों, महल के षड्यंत्रों और प्रशासनिक सुधारों के सीमित चश्मे से ही देखा जाता है। उनकी बौद्धिक क्षमता, वैचारिक गहराई और उनके भीतर के इंसान को अक्सर इतिहासकारों की दृष्टि से ओझल कर दिया जाता है। इस दृष्टि से प्रस्तुत शोध का महत्व निम्नलिखित बिंदुओं में स्पष्ट किया जा सकता है:

- **ऐतिहासिक पुनर्मूल्यांकनः** यह शोध महाराजा मानसिंह राठौड़ के व्यक्तित्व के उस पहलू को उजागर करता है जो इतिहास के पन्नों में हाशिए पर रह गया है। इतिहास उन्हें अंग्रेजों से आश्रित संधि करने वाले एक हताश शासक के रूप में चित्रित करता है, परंतु यह शोध सिद्ध करता है कि वे एक ऐसे महान दार्शनिक विचारक थे जो सत्ता की नश्वरता और नैतिकता की शक्ति को भली–भांति समझते थे। उनकी राजनीतिक 'विफलताएं' उनकी दार्शनिक 'सफलताओं' के आगे गौण हो जाती हैं।

- **डिंगल साहित्य का अकादमिक संवर्धनः** अकादमिक जगत में डिंगल साहित्य को मुख्यतः 'वीर–रसात्मक' – ओज गुण प्रधान) ही माना जाता है। डिंगल का नाम आते ही तलवारों की झंकार सुनाई देती है। यह शोध डिंगल भाषा की विविधता को सामने लाता है और यह प्रमाणित करता है कि डिंगल भाषा नीति, अध्यात्म, वैराग्य और दर्शन जैसे गूढ़, कोमल और शांत विषयों को अभिव्यक्त करने में भी पूरी तरह सक्षम और मारक ळें
- **राजधर्म की आधुनिक प्रासंगिकताः** आज के लोकतांत्रिक युग में भी सुशासन , भ्रष्टाचार मुक्ति और लोक–कल्याण का विचार उतना ही आवश्यक है जितना राजतंत्र में था। महाराजा मानसिंह के नीति–काव्य में 'प्रजा–रंजन' और 'न्याय' को शासक का सर्वोच्च धर्म बताया गया है। उन्होंने शासक के व्यसनों का जो विरोध किया है, वह आज के राजनेताओं पर भी सटीक बैठता है। वर्तमान समय के प्रशासकों और राजनेताओं के लिए उनके काव्य में निहित संदेशों का अध्ययन सुशासन के नए आयाम प्रस्तुत कर सकता ळें
- **अप्रत्याशित प्राथमिक स्रोतों का उपयोगः** यह शोध अप्रकाशित या अल्प–प्रकाशित राजस्थानी पांडुलिपियों (मेहरानगढ़ और प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान) को अकादमिक चर्चा के केंद्र में लाता है। इससे भविष्य के शोधार्थियों के लिए मारवाड़ के साहित्यिक इतिहास और अभिलेखीय अध्ययन पर नए सिरे से काम करने का मार्ग प्रशस्त होगा।
- **मनोवैज्ञानिक परिप्रेक्ष्यः** यह शोध एक राजा के मनोविज्ञान को गहराई से समझने का अवसर देता है। एक व्यक्ति जिसके पास असीमित सत्ता, अपार धन और सेना है, वह जब विपरीत परिस्थितियों से घिरता है, तो वह किस प्रकार 'नीति' और 'ईश्वर' की शरण में जाकर स्वयं को मानसिक अवसाद से बचाता है और संतुलित रखता हैकृयह अध्ययन मानव व्यवहार और शासक वर्ग के मनोविज्ञान को समझने में समाजशास्त्रियों की भी सहायता करेगा।

निष्कर्ष

संपूर्ण ऐतिहासिक और साहित्यिक विश्लेषण के आधार पर अंततः यह वस्तुनिष्ठ और प्रामाणिक निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि महाराजा मानसिंह का नीति–काव्य तत्कालीन सामंती समाज का एक निर्मम आईना है। उन्होंने तलवार के बल पर भले ही पूरे भारत को न जीता हो, परंतु अपनी लेखनी के बल पर उन्होंने नैतिकता और आध्यात्मिकता का जो साम्राज्य खड़ा किया, वह आज भी अजेय है। उनका काव्य केवल शासकों के लिए एक निर्देशिका नहीं है, बल्कि आम जनमानस के लिए जीवन जीने की एक कला है।

उन्होंने राजपूती शौर्य के साथ संतत्व का जो अद्भुत समन्वय प्रस्तुत किया, वह इतिहास में विरले ही देखने को मिलता है। उन्होंने सत्ता के केंद्र में बैठकर भी सत्ता से निर्लिप्त रहने का जो संदेश दिया, वह उन्हें भारतीय दार्शनिक परंपरा के महान 'राजर्षियों' की पंक्ति में लाकर खड़ा कर देता है। संक्षेप में कहा जा सकता है कि महाराजा मानसिंह जी का नीति–काव्य कबीर, नानक, और दादूदयाल जैसे महान संतों की श्रेणी में रखा जा सकता है। यह काव्य कल भी प्रासंगिक था, आज भी समाज को अंधकार से प्रकाश की ओर ले जाने का सामर्थ्य रखता है, और भविष्य में भी नैतिक पथ–प्रदर्शक बना रहेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. ओझा, गौरीशंकर हीराचंद. (1938). जोधपुर राज्य का इतिहास (भाग 1 और 2). अजमेरः वैदिक यंत्रालय।
2. शर्मा, डॉ. गोपीनाथ. (1971). राजस्थान का इतिहास. आगराः शिवलाल अग्रवाल एंड कंपनी।
3. भाटी, डॉ. नारायण सिंह. (1961). डिंगल साहित्य का इतिहास. जोधपुरः राजस्थानी शोध संस्थान, चौपासनी। ?

4. आसोपा, रामकरण. (1920). मारवाड़ का मूल इतिहास. जोधपुर।
5. सिंह, ज़हूरबख़्श. (संपादित). मान–काव्य कुसुमांजलि. जोधपुरः राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान।
6. गहलोत, जगदीश सिंह. (1981). मारवाड़ राज्य का इतिहास. जोधपुरः हिंदी साहित्य मंदिर।
7. मोहता, रामगोपाल (संपादित). मान पद्य संग्रह।
8. राजपूताना गजेटियर एवं तत्कालीन ईस्ट इंडिया कंपनी के रिकॉर्ड्स
9. जोधपुर राज्य के पुरालेख एवं अभिलेखागार रिकॉर्ड (विभिन्न ऐतिहासिक बही एवं खरीते), राजस्थान राज्य अभिलेखागार, बीकानेर।

❑❑❑